SEMESTER – 2nd

CC-5

IDEA OF HISTORY

(2019 - 2021)

प्लेटो

Vetted by :

प्रो0 (डॉ0) सुरेंद्र कुमार

विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग

पटना विश्वविद्यालय, पटना

संपर्क : 9835463960

आशीष कुमार

शोधार्थी इतिहास विभाग

पटना विश्वविद्यालय, पटना

प्लेटो

(427 ई0 पू0 – 347 ई0 पू0)

जीवन–परिचय

दार्शनिक शिरोमणि प्लेटो का जन्म 427 ई0 पूर्व एथेंस के एक कुलीन परिवार में हुआ था। प्लेटो का जन्म भारत में भगवान बुद्ध के निर्वाण (487 ई0 पू0) के साठ वर्ष बाद और एथेंस में पेरीक्लीज की मृत्यु के एक वर्ष बाद हुआ था।

प्लेटो की रचनाएँ

काल की दृष्टि से प्लेटो की समस्त रचनाएँ चार वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं। प्रथम वर्ग में वे प्रारंभिक रचनाएँ आती हैं, जिन्हें सुकरात से संबंधित कहा जा सकता है, सिर्फ इसलिए नहीं कि उनमें सुकरात मुख्य पात्र है, बल्कि इसलिए भी कि उनके विषय और विचार ऐतिहासिक सुकरात

के विचारों को ही अभिव्यक्त करते हैं। ऑपॉलॉजी, क्रीटो एवं यूथीफ्रो की रचनाएँ इसी कोटि में आति हैं। ये सभी रचनाएँ सुकरात की मृत्यु से संबंधित हैं। अकादमी की स्थापना के शीघ्र बाद प्लेटो ने जोर्जियस की रचना की।

द्वितीय वर्ग की कृटियों की रचना प्लेटो ने संभवतः 380 ई0 पू0 में की। उस वर्ग की रचनाएँ सुकरात के सिद्धांतों से अधिक प्लेटो के अपने सिद्धांत, विशेषकर उसके विचारों के सिद्धांत से संबंधित हैं। इस वर्ग में मीनो जो शिक्षा पर एक पुस्तक है, प्रोटागोरस जो ज्ञान को गुण बतलाती हैं, सिंगोजियम जो कला और प्रेम पर प्रकाश डालती है, फेडो जो अमरत्व से संबंधित है, रिपब्लिक जो न्याय की विवेचना करती है, और फेड्रस जो भाषण काल का ज्ञान कहलाती है, आदि कृतियाँ आती हैं। ये सब कृतियाँ प्लेटो की चरमोत्कृष्ट साहित्यिक एवं दार्शनिक प्रतिभा को प्रतिबिंबित करती हैं। इन सभी कृतियों में प्लेटो की रचनात्मक कला एवं दार्शनिक अंतर्दृष्टि के सुघड़ समन्वय का पूर्ण आभास परिलक्षित होता हैं।

तीसरे वर्ग में वे संवाद या कथोपकथन आते हैं जिनका संबंधशैली, विचार और व्यक्तित्व से अधिक द्वन्द्वात्मक पद्धति या डायलेक्टिक से है। वे हैं : पार्मिनीडिज जिसमें उसने एक और अनेक के संबंध पर प्रकाश डाला,

थीट्टिस जो ज्ञान मीमांसा से संबंधित है, सोफिस्ट जो तर्कशास्त्र संबंधी ग्रंथ है और स्टेट्समैन जिसे कभी–कभी पोलिटिकस भी कहा जाता है।

चौथे और अंतिम वर्ग में वे कृतियाँ आती हैं जो आंशिक रूप से ही नाटकीय और संवाद शैली को व्यक्त करती हैं। उन कृतियों में फीलीबस जो आचारशास्त्र के विषय में हैं, टायमीयस जिसका संबंध विश्व–ज्ञान से है, एवं लॉज आती हैं। लॉज या नोमोई प्लेटो की अंतिम प्रसिद्ध पुस्तक है जो कि उसने अपनी वृद्धावस्था में लिखी, जिसे पूर्ण तो वह संभवतः अपनी मृत्यु के पहले ही कर चुका था पर जिसका प्रकाशन उसकी मृत्यु के एक वर्ष बाद हुआ। इसमें सुकरात एक चरित्र के रूप में पूर्णतः विलीन हो जाता है। इसमें आदर्श की जगत व्यावहारिक अनुभव को प्रतिष्ठित किया गया है। संभवतः यह ग्रंथ प्लेटो के सिराक्यूज के अनुभव पर आधारित है।

शैली

प्लेटो की रचनाओं का उद्देश्य पाठकों के मस्तिष्क पर अपने तर्कबल से दबाव डालना नहीं, अपितु किसी विषय–विशेष को समझाने के लिए प्रकाश प्रदान करना है एवं अप्रत्यक्ष रूप से श्रेष्ठ जीवन का दिग्दर्शन कराना है।

प्लेटो के चिंतन की पद्धति

प्लेटो ने अपने चिंतन में सिर्फ एक ही पद्धति का नहीं, अपितु बहुत–सी पद्धतियों का प्रयोग किया है। वस्तुतः प्लेटो के दर्शन में हमें द्वन्द्वात्मक, विश्लेषणात्मक, सोद्देश्यात्मक, निगमनात्मक, आगमनात्मक एवं सादृश्यात्मक, गल्पकथात्मक और उदाहरणात्मक आदि सभी पद्धतियों के समन्वित प्रयोग का आभास मिलता है।

(क) द्वन्द्वात्मक या डायलेक्टिकल पद्धति

सुकरात का शिष्य होने के कारण प्लेटो के संवाद या वार्तालाप या द्वन्द्वात्मक शैली का प्रयोग अपनी सभी रचनाओं में किया है। द्वन्द्वात्मक पद्धति चिंतन की वह प्रणाली है, जिसके द्वारा प्रश्नोत्तर एवं तर्क–वितर्क के आधार पर किसी सत्य का अन्वेषण किया जाता है। इस पद्धति के द्वारा मस्तिष्क के विचारों को उत्तेजित कर उन्हें सत्योन्मुख करने का प्रयास किया जाता है। यह पद्धति उस प्रसूतिविद्या के समान है जो विचारोत्पत्ति में सहायक होती है। इस पद्धति द्वारा चिंतक सिर्फ स्वयं ही सत्य की खोज करने एवं सर्वमान्य सिद्धान्त प्रतिपादित करने का गुरूतर भार नहीं होता, अपितु अपने श्रोताओं का सहयोग प्राप्त करता है, उसके मस्तिष्क के किसी

कोने में छिपे विचारों को बाहर निकालता है एवं वक्ता में यह दृढ़ विश्वास होता है कि यदि श्रोता के मस्तिष्कों को प्रश्नों से झकझोरा जाय तो उनकी विवेक शक्ति अवश्य ही उत्प्रेरित होगी।

मौलिक रूप से द्वन्द्वात्मक या डायलेक्टिक प्रणाली का अर्थ वार्तालाप की प्रक्रिया से है, प्रश्न पूछने और उत्तर देने की शैली से है, तर्क–वितर्क की पद्धति से हैः किसी विषय पर अपना मत प्रकट करने और दूसरे के मत को जानने की विधि से है। वही व्यक्ति किसी विषय पर अपना मत प्रकट कर सकता है, जिसे उस विषय का ज्ञान होता है। अपना मत प्रकट करने की कला से कहीं अधिक महत्वपूर्ण दूसरे के मतों को जानने की कला है। प्रश्न पूछने की कला उतनी ही कठिन और महत्वपूर्ण है, जितनी उत्तर देने की कला। ग्रीक जगत में यह संवाद या प्रश्नोत्तर की विधि कोई नवीन विधि नहीं थी। ग्रीक के लोग स्वभाव से ही वार्ताकार होते हैं। सुकरात ने अपना समस्त जीवन वार्तालाप में ही व्यतीत किया। जेनोफोन की मेमोराबिलिया में सुकरात ने कहा कि जब लोगों में परस्पर एक साथ मिलाकर विचार करने की प्रथा आयी, तभी इस संवाद विधि का आविर्भाव हुआ। उसने यह भी कहा कि प्रत्येक व्यक्ति को इस कला का अभ्यास करना चाहिए, क्योंकि यही मनुष्यों को सर्वोत्तम मानव बनाती है। इसी के

द्वारा उनमें नेतृतव के गुणों का विकास होता है। वार्तालाप की प्रक्रिया में इसी के द्वारा विरोधियों पर आधिपत्य स्थापित किया जा सकता है। प्लेटो की डायलेक्टिक का बीच इसी उक्ति में निहित है और इसी बीच से उसने अपनी डायलेक्टिक पद्धति को अंकुरित, विकसित, पुष्पिम और अलंकृत किया है। परन्तु जहाँ प्लेटो के पूर्व के चिंतकों ने डायलेक्टिक को वार्तालाप की एक प्रणाली मात्र माना, प्लेटो की डायलेक्टिक का उद्देश्य सिर्फ बकवास करना नहीं, अपितु सत्य का अन्वेषण करना है। इस प्रकार, डायलेक्टिक को सत्योन्मुख कर प्लेटो ने इसे अनुसंधान के हेतु एक नवीन तार्किक विधि के रूप में प्रतिष्ठित किया, जिसे आगे चलकर हीगेल और मार्क्स ने और भी परिष्कृत और विस्तृत किया।

इस प्रकार प्लेटो की लेखनी में डायलेक्टिक का अर्थ सिर्फ प्रश्नोत्तर या वाद–विवाद करना नहीं, अपितु सत्य की खोज के हेतु तर्क–वितर्क करना है। यह तर्क–वितर्क शब्दों, वाद–विवादों या प्रश्नोत्तरों के द्वारा दो व्यक्तियों के बीच हो सकता है या स्वयं आत्मा के अन्दर मूल रूप से। यहाँ प्रश्न उठाया जा सकता है कि प्लेटो ने इस पद्धति का अनुसरण क्यों किया है? प्लेटो एक व्याख्याता एवं लेखक ही नहीं, अपितु एक महान शिक्षक भी है अतएव, अपनी अकादमी में जिस संवाद की विधि से उसने अपने शिष्यों

को पढ़ाना शुरू किया, उसी विधि का अनुसरण उसने अपनी रचनाओं में भी किया है, पुनः, प्लेटो सिर्फ विचार को ही प्रतिपादित करना नहीं चाहता, बल्कि यह भी दर्शाना चाहता है कि विचार वस्तुतः किसी रूप से कार्य करता है। इसके अतिरिक्त, प्लेटो का विश्वास है कि एक विचार को धराशायी कर ही दूसरे विचार को प्रतिष्ठित किया जा सकता है जब एक रूद्र विचार दूसरे विचार को निगलता है। प्लेटो की यह भी मान्यता है कि कदम–कदम बढ़कर ही एक कदम के बाद दूसरा कदम उठाकर ही, सत्य की ओर बढ़ा जा सकता है और इस हेतु प्रश्नोत्तर की विधि स्वाभाविक विधि है। प्रश्नोत्तर के स्वरूप के सम्बन्ध में प्लेटो का यह विचार उसके शिक्षा–सिद्धान्त के अनुरूप है, जिसके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के मस्तिष्क को एक बक्सा समझकर उसमें विचारों को समेटकर रखना नहीं, बल्कि आत्मचक्षु को प्रकाशोन्मुख करना है, जिससे आत्मा स्वतः अपने निहित गुणों को प्रस्फुटित, उत्तेजित और सक्रिय कर सके। यही सिद्धान्त मनुष्य के मस्तिष्क के विचार पर भी लागू होता है और इसलिए प्लेटो के अनुसार यदि मनुष्य कुछ सीखना चाहता है तो उसे सिर्फ पुस्तकों के तथ्यों को ही अपने मस्तिष्क में नहीं रखते जाना चाहिए, अपितु अपने से स्वयं प्रश्न करना

चाहिए और स्वयं उत्तर देना चाहिए कि वे तथ्य कहाँ तक सत्य और ग्राह्य हैं।

पुनः प्लेटो को डायलेक्टिक का उद्देश्य बकवास द्वारा वार्तालाप में किसी तरह विजय प्राप्त करना नहीं, बल्कि तथ्यों के आधार पर तर्क–वितर्क करना है। प्लेटो की संवाद विधि का अर्थ न शाब्दिक बकवास या विरोध करना है और न व्यर्थ कल्पना की उड़ानें भरना है। प्लेटो के अनुसार वार्तालाप की वही विधि डायलेक्टिक कहला सकती है जो वास्तविक तथ्यों के अनुकूल हो। एक वास्तविक तार्किक पद्धति के रूप में डायलेक्टिक का अभिप्राय होता है। सामान्य शब्द जाल से मुक्त होना वाद–विवाद के साधारण तरीके को त्यागना, शब्दों के सही प्रयोग को जानना, शब्दों का तथ्यानुकूल प्रयोग करना, एवं तर्क की ऐसी विधि अपनाना जो विश्व के वास्तविक क्रय के अनुकूल हो। इस रूप में प्लेटो की डायलेक्टिक विश्व के संगठन सम्बन्धी उसकी धारणा पर आधारित है। प्लेटो के अनुसार ब्रह्मांड या समस्त विश्व एक संहति सम्पूर्ण है जिसके बहुत से अंग हैं, जिसमें प्रत्येक अंग एक दूसरे से जुड़ा है, जहाँ एक को दूसरे अंग के संबंध के संदर्भ में ही जाना जा सकता है जिसके एक अंग को जानने के लिए दूसरे अंग को जानना आवश्यक है, और जिसका एक अंग उस सम्पूर्ण के

मौलिक स्वरूप के केवल अल्पांश को अभिव्यक्त करता है। प्लेटो के अनुसार विचार की पद्धति विश्व की आंगिक सम्पूर्णता के स्वरूप ही होनी चाहिए। प्लेटो ने स्वयं इस विशिष्ट विचार को अपनी इस उक्ति में अभिव्यक्त किया है कि ज्ञान का उद्देश्य ''अनेक में एक'' और ''एक में अनेक'' को पाना है। यह उक्ति विश्व के आंगिक स्वरूप को तकनीकी रूप से अभिव्यक्त करती हैः क्योंकि प्रत्येक आंगिक पदार्थ का स्वरूप ''एक में अनेक'' और ''अनेक में एक'' का होना है और जिसके एक अंग का ज्ञान प्राप्त करने के लिए दूसरे अंग का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है। प्लेटो ने अपनी कृति फीलीपस में कहा है कि डायलेक्टिक की उत्पत्ति इसी मौलिक तथ्य से होता है कि सभी वस्तुओं में एकता और अनेकता का सामंजस्य पाया जाता है। अतएव, ज्ञान की पद्धति के रूप में प्लेटो की डायलेक्टिक में दो प्रक्रियाओं का संयोग हैः एक मिश्रण को प्रक्रिया काः और दूसरा, विभाजन की प्रक्रिया को। प्लेटो ने मिश्रण की प्रक्रिया तब अपनायी है जबकि बाह्य जगत के अनेक पदार्थों में उस अन्तिम तत्व या सत्य को देखना है जिसे वह सत या श्वि का रूप कहता है, और विभाजन की प्रक्रिया का तब अनुसरण करता है जब वह यह दर्शाने का प्रयास करता है कि सत् या शिव का रूप किस प्रकार से बाह्य जगत् की विभिन्न वस्तुओं

द्वारा प्रकट होता है। अपनी पुस्तक रिपब्लिक में प्लेटो ने यह स्पष्ट कर दिया है कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु का रूप एक दूसरे से मिलकर सत् या शिव का स्वरूप धारण करते हैं। प्लेटो ने अपनी इस डायलेक्टिकल पद्धति का योग तीन उद्देश्यों से किया है : एक, सत्य के अन्वेषण के हेतु, दूसरा, सत्य के प्रकट और प्रचार के हेतु : एवं तीसरा, सत्य की परिभाषा के हेतु।

प्लेटो की डायलेक्टिक पद्धति की आलोचना भी की गयी है। इसका प्रथम दोष यह है कि इसमें उत्तर से अधिक प्रश्नों पर जोर दिया जाता है और जितने उत्तर नहीं दिये जाते उससे अधिक प्रश्न पूछे जाते हैं। फलस्वरूप, इस पद्धति से मस्तिष्क स्पष्ट होने के बदले भ्रांत ही हो जाता है। द्वितीय, इसके द्वारा यह प्रमाणित किया जा सकता है कि प्रत्येक वस्तु वह है जो वास्तव में वह नहीं है और इस तरह सत्य को असत्य और असत्य को सत्य प्रमाणित किया जा सकता है। तृतीय, यह पद्धति इस मान्यता पर आधारित है कि प्रश्नोत्तर एवं तर्क–वितर्क के द्वारा ही सत्य की प्राप्ति संभव है जबकि ईसा, बुद्ध, महावीर, गाँधी आदि ऋषियों का उदाहरण इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि सत्य की प्राप्ति वाद–विवाद से नहीं, बल्कि मनन और चिंतन से हो सकती है। अत्यधिक वाद–विवाद मानसिक

शक्ति का नहीं बल्कि मानसिक दुर्बलता का परिचायक हो सकता है और इसके सहारे धूर्त्त और मक्कार अपनी थोथी के चलते समाज में प्रभावशाली हो सकते हैं। चतुर्थ, अत्यधिक तर्क–वितर्क से शंकाओं का समाधान नहीं अपितु इनकी वृद्धि होती है और फलस्वरूप विकास की गति अवरूद्ध हो जाती है। अंत में, रेखागणित के प्रमेयों भाँति यह पद्धति स्थैतिक और गतिहीन होती है। फलस्वरूप, यह परिवर्तन और प्रगति की विरोधी होती है।

इन त्रुटियों के बावजूद इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि इसी पद्धति के द्वारा प्लेटो ने न्याय के सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है, एक श्रेष्ठतम राज्य की आदर्शपूर्ण रूप–रेखा का चित्रण किया है, सत् के स्वरूप को दर्शाया है, सद्गुण के सिद्धान्त को स्पष्ट किया है, एवं तथ्यात्मक वाद–विवाद करने का मार्ग प्रशस्त किया है, विचार और चिंतन करने की शक्ति को उत्प्रेरित करने का संदेश दिया है एवं परिभाषा को सटीक और व्याख्या को सुस्पष्ट बनाने का मूलमंत्र प्रदान किया है इस पद्धति के द्वारा प्लेटो ने यह भी दर्शाने का प्रयास किया है कि राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं को वाद–विवाद एवं तर्क–वितर्क के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है, शक्ति या कट्टर विचार या अंधविश्वास के द्वारा नहीं, श्रेष्ठ जीवन के स्वरूप और उसके प्राप्ति हेतु साधनों का अन्वेषण विवेक

द्वारा दार्शनिक चिंतन से सम्भव है, हिंसा से नहीं, एवं विश्व तथा मानव के वास्तविक स्वरूप के आधार पर राजनीति को आधारित कर राज्य की आधारशिला को दृढ़ किया जा सकता है, अमूर्त व्यक्ति की कल्पना पर नहीं।

(ख) विश्लेषणात्मक पद्धति

प्लेटो ने अपने चिंतन में विश्लेषणात्मक पद्धति का भी अनुसरण किया है। इस पद्धति में किसी वस्तु के मौलिक तत्वों को विभाजित कर उनका पृथक्–पृथक् अध्ययन किया जाता है जिसे कि उन तत्त्वों से निर्मित सम्पूर्ण वस्तु का पूर्ण ज्ञान हो सके। उदाहरणस्वरूप, जब प्लेटो आत्मा के स्वरूप की व्याख्या करता है, तो सर्वप्रथम आत्मा को तीन निर्माणकारी तत्वों – विवेक, साहस एवं क्षुधा में विभाजित करता है और इन्हीं तीनों तत्वों के पृथक्–पृथक् अध्ययन के आधार पर किसी व्यक्ति के स्वभाव का निर्णय करता है। इसी प्रकार राज्य के अध्ययन के हेतु सर्वप्रथम वह राज्यों को तीन वर्गों – दार्शनिक, सैनिक और उत्पादक में बाँटता है और इन्हीं तीन वर्गों के विश्लेषण के आधार पर उनसे निर्मित राज्य का विश्लेषण करता है। यद्यपि विश्लेषणात्मक पद्धति का पूर्ण प्रयोग अरस्तु ने अपने दर्शन में विस्तृत

रूप से किया है, तथापि प्लेटो की रिपब्लिक में भी यत्र–तत्र इस पद्धति की झाँकी है।

(ग) सोद्देश्यात्मक पद्धति

प्लेटो ने सोद्देश्यात्मक पद्धति का भी प्रयोग किया है। सोद्देश्यता का अर्थ होता है कि प्रत्येक वस्तु का कुछ उद्देश्य होता है और प्रत्येक वस्तु अपने उद्देश्य की प्राप्ति के हेतु सतत प्रयत्नशील रहती है और उसी ओर अग्रसर होती है। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक वस्तु की गति उसके उद्देश्य द्वारा ही निरूपित होती है। अपने स्वाभाविक उद्देश्य को प्राप्त कर कोई वस्तु अपनी पूर्णता को प्राप्त करती है, अपने स्वभाव का पूर्णरूप से विकास कर पाती है। प्लेटो के शिक्षा–सिद्धांत का दार्शनिक आधार सोद्देश्यता ही है।